न्यायमंत्री

सुदर्शन

यह घटना आज से २५०० वर्ष पहले की है ।

एक दिन सन्ध्या समय जब आकाश में बादल लहरा रहे थे, बुद्धगया नामक गाँव में एक परदेशी शिशुपाल ब्राह्मण के द्वार पर आया और नम्रता से बोला 'क्या मुझे रात काटने के लिए स्थान मिल सकेगा ?

शिशुपाल अपने गाँव में सबसे गरीब थे । घोर दरिद्रता ने भूखे बैल की तरह उनकी हड्डियों का पिंजर निकाल रखा था । उनकी आजीविका थोड़ी सी भूमि पर चलती थी । परन्तु फिर भी परदेशी को द्वार पर देखकर उनका मुख खिल गया । उन्होंने मुसकराते हुए कहा– 'यह मेरा सौभाग्य है । आइए, पधारिए, अतिथि के चरणों से मेरा चौका पवित्र हो जाएगा ।'

परदेशी और ब्राह्मण दोनों अन्दर गए । भारतवर्ष में अतिथि–सत्कार की रीति बहुत प्रचलित थी । शिशुपाल के पुत्र ने अतिथि का सत्कार किया । परदेशी मुग्ध हो गया । उसने ब्राह्मण से कहा– 'आपका पुत्र बड़े काम का आदमी है । उसकी सेवा से मैं बहुत प्रसन्न हुआ ।'

शिशुपाल ने नाक भौं चढ़ाकर उत्तर दिया– 'आप हमारे अतिथि हैं, अन्यथा ब्राह्मण ऐसे शब्द कभी नहीं सुन सकते । मेरा पुत्र ब्राह्मण है, सेवक नहीं ।'

परदेशी ने अपनी भूल पर लज्जित होकर कहा– 'क्षमा कीजिए । मेरा यह अभिप्राय न था । परन्तु आजकल वे ब्राह्मण कहाँ हैं ? अब तो आँखें उनके लिए तरसती है ।'

शिशुपाल ने उत्तर दिया– 'ब्राह्मण तो अब भी बहुत हैं, कमी केवल देखने वाले व्यक्तियों की है ।'

'मैं आप का अभिप्राय नहीं समझा ।'

शिशुपाल ने एक लम्बी–चौड़ी वक्तृता आरम्भ कर दी, जिसको सुनकर परदेशी चकित रह गया । उसकी बातें ऐसी युक्तियुक्त और प्रभावशाली थी कि परदेशी हैरान रह गया । इस छोटे से गाँव में ऐसा विद्वान्, ऐसा महान्, ऐसा तत्त्वदर्शी पण्डित हो सकता है, इसकी उसे कल्पना भी न थी । उसने शिशुपाल का युक्तियुक्त तर्क और शासन–पद्धति का इतना विशाल ज्ञान देखकर कहा– 'मुझे ख्याल न था कि यहाँ गोबर में फूल खिला होगा । महाराज अशोक को पता लग जाए, तो आपको किसी ऊँची पदवी पर नियुक्त कर दें।'

शिशुपाल के सूखे होठों पर मुसकुराहट आ गई । जिसका अन्तःकरण कुढ़ रहा हो, जिसके नेत्र आँसू बरसा रहे हों, जिसका मस्तिष्क अपने आप में न हो, उसके होठों पर हँसी भी भयानक प्रतीत होती है । शिशुपाल की आँखें नीचे झुक गईं । उन्होंने थोड़ी देर बाद सिर उठाया और कहा– 'आजकल बड़ा अन्याय हो रहा है, जब देखता हूँ तो मेरा खून उबलने लग जाता है, और रात की नींद उड़ जाती है ।'

परदेशी ने पैंतरा बदल कर उत्तर दिया– 'शेर बकरी एक घाट पानी पी रहे हैं ।'

'रहने दो मैं सब जानता हूँ ।'

'दूसरों का दोष देखना आसान है । परन्तु आप कुछ करके दिखाना कठिन है ।'

शिशुपाल ने अग्नि पर पड़े हुए पत्ते की तरह झुलसकर उत्तर दिया– 'अवसर मिले तो दिखा दूँ कि न्याय किसे कहते हैं।'

'तो आप अवसर चाहते हैं ?'

'हाँ ! मैं अवसर चाहता हूँ ।'

'फिर कोई अन्याय न होगा ।'

'बिलकुल न होगा ।'

'कोई अपराधी दण्ड से न बचेगा ।'

'कदापि नहीं बचेगा ।'

परदेशी के सहज भाव से कहा– 'यह बहुत कठिन है।'

'ब्राह्मण के लिए कोई काम कठिन नहीं । अवसर मिले तो मैं न्याय का डंका बजा कर दिखा दूँगा, कि न्याय क्या होता है ।

परदेशी के मुख पर मुसकराहट थी, आँखों में आभा । उसने हँसकर उत्तर दिया – 'यदि मैं अशोक होता, तो आपकी इच्छा पूरी कर देता ।'

सहसा ब्राह्मण के हृदय में एक सन्देह उठा, परन्तु दूसरे क्षण में दूर हो गया । अब वह फिर वही ब्राह्मण था, वही उसकी बातें थीं, वही उसकी गम्भीरता थी ।

(२)

दूसरे दिन महाराजा अशोक के दरबार में शिशुपाल को बुलाया गया । इस समाचार से गाँव भर में आग सी लग गई । यह वह समय था जब महाराजा अशोक का राज्य आरम्भ ही हुआ था, और दमन नीति का भी आरम्भ था । उस समय महाराज ऐसे निर्दय और निष्ठुर थे कि ब्राह्मणों और स्त्रियों को भी फाँसी पर चढ़ा दिया करते थे । उनकी दयाहीन दृष्टि से बड़े–बड़े वीरों के भी प्राण सूख जाते थे । लोगों ने समझ लिया, कि शिशुपाल के लिए महाराजा का यह बुलावा मृत्यु का बुलावा है । उनको पूरा–पूरा विश्वास था कि अब शिशुपाल जीते जी न लौटेंगे। परिणाम यह हुआ कि शिशुपाल के सम्बन्धियों पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा । वे फूट–फूट कर रोने लगे। लोगों ने धीरज बँधाना चाहा । परन्तु शिशुपाल

के माथे पर बल न था । वे कहते थे- 'जब मैंने कोई अपराध नहीं किया, राज्य के किसी कानून को नहीं तोड़ा, तो कोई मुझे क्यों फाँसी देने लगा । निस्सन्देह राजा ऐसा अन्यायी और अन्धा नहीं हो सकता कि निर्दोष ब्राह्मणों को दुःख देने पर उतारू हो जाए ।'

दुःख और कष्ट की लहरों के बीच समुद्र की शिला की तरह शिशुपाल अटल खड़े थे । उन्होंने पुत्र और स्त्री को दिलासा दिया, और पाटलिपुत्र की ओर चले ।

साँझ हो गई थी, जब शिशुपाल पाटलिपुत्र पहुँचे । वे जब राजमहल में पहुँचाए गए, उस समय तक उनको किसी बात का भय न था । परन्तु राजमहल की शान-शोभा देखकर उन पर भय छा गया । मनुष्य थोड़े जल में निर्भय रहता है, परन्तु गहराई में पहुँचकर घबरा जाता है । शिशुपाल के हृदय में कई प्रकार के बुरे-बुरे विचार उठने लगे । कभी सोचते किसी ने कोई शिकायत न कर दी हो, जो जी में आता है, बेधड़क कह दिया करता हूँ। कहीं इसका फल न भुगतना पड़े। कई शत्रु हैं। कभी सोचते वह परदेशी पता नहीं कौन था ? हो सकता है कोई गुप्तचर ही हो । और यह आग उसी की लगाई हुई हो, तब तो उसने सब कुछ कह दिया होगा । कैसी मूर्खता की, जो एक अपरिचित से घुलमिल कर बातें करता रहा, अब पछता रहा हूँ । कभी सोचते शायद मेरी दरिद्रता की कहानी यहाँ तक पहुँच गई हो और महाराज ने मुझे कुछ देने को बुला भेजा हो, यह भी तो हो सकता है । इस विचार से हृदय-कमल खिल जाता, परन्तु फिर दूसरे विचार से मुरझा जाता ।

इतने में सेवक ने आकर कहा- 'महाराज आ रहे हैं ।'

शिशुपाल का कलेजा धड़कने लगा । उनके प्राण होठों तक आ गए, राजा का कितना रोब होता है, इसका पहली बार अनुभव हुआ । दृष्टि द्वार की ओर जम गई । महाराज अशोक राजकीय ठाठ से कमरे में आए, और मुसकराते हुए बोले- ब्राह्मण देवता नमस्कार । आशा है, आपने परदेशी को पहचान ही लिया होगा ।

शिशुपाल घबरा कर खड़े हो गए । इस समय उनका रोम-रोम काँप रहा था.....यह वही था । वही परदेशी ।

(३)

हाँ यह वही थे । शिशुपाल काँप कर रह गए । कौन जानता था कि शीतकाल की रात को एक ब्राह्मण के यहाँ आश्रय लेने वाला परदेशी, भारत का सम्राट हो सकता है । शिशुपाल ने तुरन्त अपने अस्थिर हृदय को स्थिर कर लिया और कहा– 'मुझे पता न था कि आप ही महाराज हैं । अन्यथा इतनी स्वतन्त्रता से बातचीत न करता । राजा राजा है, प्रजा प्रजा है । दोनों के बीच में बहुत अन्तर है ।'

महाराज अशोक बोले 'हूँ' ।

'परन्तु मैंने कोई बात बढ़ाकर नहीं कही थी । मैं हर बात को पहले तोलता फिर उसे मुँह से बोलता हूँ ।'

'हूँ' ।

'मैं प्रमाण दे सकता हूँ ।'

महाराज ने कहा– 'हम नहीं चाहते ।'

'तो मुझे क्या आज्ञा होती है महाराज की ओर से ?'

'महाराज आपकी परीक्षा करना चाहते हैं ।'

शिशुपाल के हृदय में सहसा एक विचार उठा– मगर क्या वह ठीक हो जाएगा ?

महाराज ने कहा– 'आपने कहा था कि अगर आपको अवसर दिया जाए, तो आप न्याय का डंका बजा देंगे । हम आपकी इसी विषय में परीक्षा लेना चाहते हैं । आप तैयार हैं ?'

शिशुपाल ने हंस की तरह गर्दन ऊँची की, और कहा– 'जी हाँ । अगर महाराज की इच्छा है तो मैं तैयार हूँ ।'

'कल प्रातःकाल से आप न्याय–मंत्री नियत किए जाए हैं । सारे नगर पर आपका अधिकार होगा ।'

'पाटलिपुत्र में शान्ति-रक्षा-विभाग का हर कर्मचारी आपके अधीन होगा और शान्ति रखने का उत्तरदायित्व केवल आप ही पर होगा ।'

बहुत अच्छा ।'

'यदि कोई दुर्घटना हो गई, या कोई हत्या हो गई तो उसका उत्तर-दायित्व भी आप पर होगा ।'

'बहुत अच्छा ।'

महाराज थोड़ी देर चुप रहे, फिर हाथ से शाही अँगूठी उतार कर बोले- 'यह राजमुद्रा है। आप कल प्रातःकाल की पहली किरण के साथ न्याय-मंत्री समझे जाएँगे । हम देखेंगे, आप अपने आपको किस प्रकार सफल शासक सिद्ध कर सकते है । आप अवसर चाहते थे, आपको अवसर मिल गया ।'

४

एक महीना बीत गया । न्याय-मंत्री के न्याय और प्रबन्ध की चारों ओर धाक बैठ गई। शिशुपाल ने नगर पर जादू डाल दिया है, ऐसा प्रतीत होता था । उन्होंने चोर-डाकुओं को इस प्रकार वश में कर लिया था, जिस प्रकार साँप को बीन बजाकर सँपेरा वश में कर लेता है । उन दिनों यह हाल था कि लोग दरवाजे तक खुले छोड़ जाते थे, परन्तु किसी की चोरी नहीं होती थी । शिशुपाल का न्याय अन्धा और बहरा था जो न सूरत देखता था, न सिफारिश सुनता था । वह केवल दंड देना जानता था और दंड भी शिक्षाप्रद । नगर की हालत में आकाश-पाताल का अन्तर पड़ गया । लोग हैरान थे, लोग खुश थे, लोगों की खुशी उनके मन में न समाती थी ।

रात का समय था । आकाश में तारे खेलते थे । एक अमीर ने एक विशाल भवन के द्वार पर दस्तक दी । दरीचे से किसी स्त्री ने सिर निकाल कर पूछा, 'कौन है ?'

'मैं हूँ ।' दरवाज़ा खोल दो ।'

'परन्तु वे यहाँ नहीं हैं ।'

'परवा नहीं । तुम दरवाज़ा खोल दो ।'

स्त्री ने कुछ सोचकर उत्तर दिया– 'मैं नहीं खोलूँगी । तुम इस समय वापस चले जाओ ।'

अमीर ने क्रोध से कहा– 'दरवाजा खोल दो, नहीं तो मैं इसे तोड़ डालूँगा ।'

स्त्री ने उत्तर दिया– 'जानते नहीं हो, शहर पर शिशुपाल का शासन है । अब कोई इस प्रकार बलात्कार नहीं कर सकता ।'

अमीर ने तलवार निकाल कर दरवाजे पर आक्रमण किया । सहसा एक पहरेदार ने आकर उसका हाथ थाम लिया, और कहा– 'क्या कर रहे हो ?'

अमीर ने उसकी ओर आग भरी आँखों से देखा, और क्रोध भरे शब्दों में बोला– 'तुम कौन हो ?'

'मैं पहरेदार हूँ ।'

'तुम्हें पहरेदार किसने नियत किया है ?'

'न्याय–मंत्री ने ।'

'मूर्खता न करो । मैं उसे भी मिट्टी में मिला सकता हूँ ।'

पहरेदार ने साहस से उत्तर दिया– 'परन्तु इस समय महाराज अशोक भी आएँ तो भी मैं यहाँ से न टलूँगा ।'

'क्यों मौत को बुला रहे हो ?'

'मैंने जो प्रण किया है उसे पूरा करूँगा ।'

'किससे प्रण किया है ?'

'न्याय–मन्त्री से ।'

'क्या प्रण किया है ?'

'यही कि जब तक तन में प्राण हैं और जब तक लहू का अन्तिम बिन्दु भी मेरे शरीर में बाकी है मैं अपने कर्त्तव्य से कभी पीछे न हटूँगा ।'

अमीर ने तलवार खींच ली । पहरेदार ने पीछे हट कर कहा– 'आप भूल कर रहे हैं । मैं नौकरी पर हूँ । मेरी पीठ पर सारे राज्य की सेना है । 'परन्तु अमीर ने सुना अनसुना कर दिया और तलवार लेकर झपटा । पहरेदार ने भी तलवर खींच ली । परन्तु वह अभी नया था, पहले ही बार में गिर गया और मारा गया । अमीर का लहू सूख गया । उसके हाथों के तोते उड़ गए। वह उसे केवल डराना चाहता था । परन्तु घाव मर्मस्थल पर लगा । अमीर ने उसकी लाश को एक ओर कर दिया और आप भाग निकला ।

(५)

प्रातःकाल इस घटना की घर–घर में चर्चा थी । लोग हैरान थे कि इतना साहस हो गया कि शान्ति–रक्षा–विभाग के कर्मचारी को जान से मार डाले, और फिर शिशुपाल के शासन में । राजधानी में आंतक छा गया । शान्ति–रक्षा विभाग के कर्मचारी चारों ओर दौड़ते–फिरते थे । मानो यह उनके जीवन और मरण का प्रश्न हो । न्याय–मंत्री ने भी मामले की खोज में दिन रात एक कर दिया । यह घटना उसके शासन–काल की पहली दुर्घटना थी । वह खाना पीना भूल गया, आँखों से नींद उड़ गई । हत्यारे की खोज में कोई कसर उठा न रखी, परन्तु हत्यारे का कुछ भी पता न लगा ।

असफलता का हर एक दिन अशोक की क्रोधाग्नि को अधिकाधिक प्रज्ज्वलित कर रखा था । वे कहते– 'तुमने कितने जोर से न्याय का दावा किया था ? अब क्या हो गया ?'

न्याय–मंत्री लज्जा से सिर झूका झुका लेते ।

महाराज कहते– 'हत्यारा कब तक पकड़ा जायेगा ?'

न्याय–मंत्री उत्तर देते– 'यत्न कर रहा हूँ आशा है जल्द ही पकड़ लूँगा ।'

महाराज कुछ दिन ठहर कर फिर पूछते– 'हत्यारा पकड़ा गया ?'

दूसरे दिन महाराज वही प्रश्न करते ।

न्याय-मंत्री कहते, 'नहीं ।'

महाराज का क्रोध भड़क उठता । उनकी आँखों से आग की चिनगारियाँ निकलने लगतीं, बादल की तरह गरज कर कहते- 'हम यह 'नहीं' सुनते-सुनते तंग आ गये हैं ।'

इसी प्रकार एक सप्ताह बीत गया, परन्तु हत्यारे का पता न लगा । अन्त में महाराज अशोक ने शिशुपाल को बुला कर कहा-'तुम्हें तीन दिन की और मोहलत दी जाती है । यदि इस बीच में हत्यारा न पकड़ा गया तो तुम्हें फाँसी दे दी जाएगी । और हम जो कहते हैं वह करके भी दिखा सकते हैं । अपनी जान बचाने का यत्न करो ।'

इस समाचार से नगर भर में हलचल सी मच गई। एक महीने के अन्दर अन्दर शिशुपाल लोकप्रिय हो चुके थे । उनके न्याय की चारों ओर धाक बँध गई थी । लोग महाराज को गालियाँ देने लगे । जहाँ चार आदमी जमा होते, इसी विषय पर बातचीत करने लगते । वे चाहते थे कि चाहे कुछ भी हो जाए, परन्तु शिशुपाल का बाल बाँका न हो । शिशुपाल स्वयं बड़ी उत्सुकता के साथ हत्यारे की खोज में लीन थे । परन्तु व्यर्थ । यहाँ तक कि तीसरा दिन आ गया, अब कुछ ही घण्टे बाकी है ।

रात का समय था, परन्तु शिशुपाल की आँखों में नींद न थी। वे नगर के एक घने बाजार में घूम रहे थे । सहसा एक मकान की खिड़की खुली और एक स्त्री ने झाँक कर बाहर देखा। चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी । स्त्री ने धीरे से कहा-'तुम कौन हो ? क्या पहरेदार ?'

निराशा के अँधेरे में आशा की एक किरण चमक गई ।

शिशुपाल ने उत्तर दिया- 'मैं न्याय-मंत्री हूँ ।'

'तो जरा यहीं ठहरिए ।'

स्त्री खिड़की से पीछे सट गई, और दीपक लेकर नीचे आई । न्याय-मंत्री को साथ लेकर वह अपने कमरे में गई और बोली- 'आज अन्तिम रात है ?'

न्याय–मंत्री ने चुभती हुई दृष्टि से स्त्री की ओर देखा, और उत्तर दिया– 'हाँ अन्तिम ।'

शब्द साधारण थे, परन्तु इनका अर्थ साधारण न था । स्त्री तिलमिलाकर खड़ी हो गई और बोली– 'मैं इस घटना को अच्छी तरह जानती हूँ ।'

शिशुपाल की मुर्दा देह में प्राण आ गये । वे धैर्य धरकर बोले– 'तो कहो ।'

रात का समय था । हत्यारे ने इस मकान का दरवाजा खटखटया । वह यहाँ प्राय: आया करता है ।

'परन्तु क्यों ?'

'उसका आचार अच्छा नहीं ।'

'फिर आगे ?'

मैंने उत्तर दिया, जिसके पास तुम आए हो वह आज यहाँ नहीं है । परन्तु उसने यह झूठ समझा, और दरवाजा तोड़ने को तैयार हुआ । पहरेदार ने उसे रोका और उसके हाथ से मारा गया ।'

न्याय–मंत्री ने पूछा– 'परन्तु हत्यारा कौन है ?'

स्त्री ने उसके कान में कुछ कहा, और सहमी हुई कबूतरी की तरह चारों ओर देखा ।

(६)

दूसरे दिन दरबार में तिल धरने को स्थान न था । आज न्याय–मंत्री का भाग्य–निर्णय होने वाला था । अशोक ने सिंहासन पर पैर रखते ही कहा– 'न्याय–मंत्री को उपस्थित किया जाय !'

शिशुपाल सामने आए । इस समय उनके मुख पर कोई चिन्ता, कोई अशान्ति न थी । महाराज ने पूछा– 'हत्यारे का पता लगा ?'

न्याय–मंत्री ने साहसपूर्वक उत्तर दिया– 'जी हाँ ! लग गया ।'

'पेश करो ।'

न्याय– मंत्री ने सिर झुकाकर कुछ सोचा । इस समय उनके हृदय में दो विरोधी शक्तियों का संग्राम हो रहा था । यह उनके मुख से स्पष्ट प्रतीत होता था । सहसा उन्होंने दृढ़ संकल्प से सिर उठाया, और अपने एक उच्च अधिकारी को लक्ष्य करते हुए कहा– 'धनवीर !'

'श्रीमन् !'

'गिरफ्तार कर लो, मैं आज्ञा देता हूँ ।'

इशारा महाराज की ओर था, दरबार में सन्नाटा छा गया । अशोक का चेहरा लाल हो गया, मानो वह तपा हुआ ताँबा हो । आँखों से अग्नि-कण निकलने लगे । वे तिलमिला कर खड़े हो गए और बोले- 'अरे ब्राह्मण ! तेरी यहाँ तक मजाल ।' न्याय-मंत्री ने ऐसा प्रकट किया मानो कुछ सुना ही नहीं, और अपने शब्दों को फिर दोहराया, मैं आज्ञा देता हूँ गिरफ्तार कर लो' ।

धनवीर पुतली की तरह आगे बढ़ा । दरबरियों की साँस रुक गई । महाराज सिंहासन से नीचे उतर आए । न्याय-मंत्री ने कहा - 'यह हत्यारा है । इसे मेरी अदालत में पेश करो ।'

यह कह कर वह अपनी कचहरी की ओर चले गए।

धनवीर ने अशोक को हथकड़ी लगा ली, और शिशुपाल की कचहरी की ओर ले चला । वहाँ सारा नगर उपस्थित था । शिशुपाल ने आज्ञा दी- 'अपराधी राजकुल से है, इसे अकेला पेश किया जाए ।'

महाराज अशोक ने संकेत किया, मंत्रीगण पीछे हट गए । महाराज उस जंगले में खड़े हो गए, जो अपराधियों के लिए था । छत्रपति नरेश ने अपने राज्य में स्वयं उसके नौकर के हाथों यह व्यवहार हो सकता है, इसका किसी को ख्याल भी न था । परन्तु शिशुपाल दृढ़ संकल्प के साथ न्यायासन पर विराजमान थे । उन्होंने आँख से महाराज को प्रणाम किया । हाथों को न्याय-रज्जु ने बाँध रखा था । वे धीरे से बोले- तुम पर पहरेदार की हत्या का आरोप है । बोलो, तुम इसका क्या उत्तर देते हो ?' महाराज अशोक ने होंठ काट कर उत्तर दिया- 'वह उद्दण्ड था ।'

तो तुम अपराध स्वीकार करते हो ? 'हाँ ! हमने उसको मारा है। परन्तु हमने जानबूझकर नहीं मारा, हम उसे डराना चाहते थे । वह घायल हो गया । घाव गहरा था, वह मर गया। मगर वह उद्दण्ड था।'

'वह उद्दण्ड नहीं था । मैं उसे चिरकाल से जानता हूँ ।'

'वह उद्दण्ड था ! तुम झूठ बोलते हो मैं तुम्हें मौत की सजा देता हूँ ।'

अशोक की आँखें लाल हो गईं । मंत्रियों ने तलवारें निकाल लीं। कई आदमी शिशुपाल को गालियाँ देने लगे । एक आवाज आई- तुम अपना सिर सँभालो । अशोक ने हाथ उठाकर शांत रहने का संकेत किया । चारों ओर फिर वही निस्तब्धता छा गई। न्याय-मंत्री ने कड़ककर कहा- 'आप लोगों का क्रोध करना सर्वथा अनुचित है। मैं इस समय न्याय-मंत्री के आसन पर हूँ, और न्याय करने बैठा हूँ । महाराज अशोक की दी हुई मुद्रा मेरे हाथ में है । यदि किसी ने शोर-शार किया, तो मैं उसे भी अदालत के अपमान के अपराध में गिरफ्तार कर लूँगा । लोग चुप हो गए ।

'अशोक ! तुमने राज-कर्मचारी की हत्या की है । मैं तुम्हारे वध की आज्ञा देता हूँ ।' महाराज ने सिर झुका दिया । इस समय उनके हृदय में आनन्द का समुद्र लहरें मार रहा था । सोचते थे, यह मनुष्य सोना है, जो आग में पड़कर कुन्दन हो गया है । कहता था, मेरा न्याय अपनी धूम मचा देगा । इसका वह वचन झूठा न था । इसने अपने कहने की लाज रख ली है । ऐसे ही मनुष्य होते हैं, जिन पर जातियाँ अभिमान करती हैं, और जिन पर लोग अपना तन-मन निछावर करने को उद्यत हो जाते हैं । उन्होंने एक विचित्र भाव से सिर ऊँचा किया और कहा- 'हम इस आज्ञा के विरुद्ध कुछ नहीं बोलना चाहते ।'

न्याय-मंत्री ने एक आदमी को इशारा किया । वह एक स्वर्ण-मूर्ति लेकर उपस्थित हुआ । न्याय-मंत्री ने खड़े होकर कहा- 'सज्जनो ! यह सच है कि मैं न्याय-मंत्री हूँ । यह सच है कि मेरा काम न्याय करना है । यह भी सच है, कि एक राज -कर्मचारी की हत्या की गई है । उसका दण्ड अवश्यम्भावी है । परन्तु शास्त्रों में राजा को ईश्वर का रूप माना जाता है । उसे ईश्वर ही दण्ड दे सकता है । यह काम न्याय-मंत्री की शक्ति से बाहर है । इसलिए मैं आज्ञा देता हूँ कि महाराज को चेतावनी देकर छोड़ दिया जाए,और उनकी यह मूर्त्ति फाँसी पर लटकायी जाए, ताकि लोगों को शिक्षा मिले और वे भविष्य में कोई ऐसा अपराध न करें ।

न्याय-मंत्री का जय-जय कार हुआ । लोग इस न्याय पर लट्टू हो गए । वे कहते थे - वह मनुष्य लोहे का है जो न किसी व्यक्ति से डरता है, और न किसी शक्ति के आगे सिर झुकाता है । यह अन्तःकरण की आवाज सुनता है, और उस पर निर्भयता से बढ़ा चला जाता है । और कोई होता, तो महाराज के सामने हाथ बाँध कर खड़ा हो जाता । परन्तु इसने उन्हें तुम कह कर सम्बोधन किया है, मानो कोई साधारण अपराधी हो । महाराज के शरीर में रोमांच हो गया । सहस्त्रों आँखों ने आनन्द के आँसू बहाए, और सहस्त्रों जबानों ने जोर-जोर से कहा- 'न्याय-मंत्री की जय ।'

रात हो गई थी, न्याय-मंत्री राज महल में पहुँचे और अशोक के सामने शाही अँगूठी रखकर बोले, महाराज ! यह अपनी अँगूठी आप सँभालें । मैं अपने गाँव वापस जाऊँगा ।'

अशोक ने सम्मान की दृष्टि से उनकी तरफ देखकर कहा-आज आप ने मेरी आँखें खोल दी हैं । अब यह कैसे हो सकता है ?

परन्तु श्रीमान्....

अशोक ने बात काट कर कहा- 'आपका साहस मैं कभी न भूलूँगा । वह बोझ आप ही उठा सकते हैं । मुझे कोई दूसरा इस पद के योग्य दिखाई नहीं देता ।

न्याय-मंत्री निरुत्तर हो गए ।

●●●

शब्द-अर्थ

आजीविका - रोजगार, सौभाग्य- अच्छा भाग्य, चौका- रसोई का स्थान, अभिप्राय- उद्देश्य, वक्तृता- भाषण, अवसर- अवकाश, समय, दमन- दण्ड, स्वतंत्रता- आजादी, नियत- नियुक्ति, दरीचे- खिड़की, मोहलत- अवधि, निस्तब्धता- सन्नटा, संग्राम- युद्ध, जंगले- खिड़की, निरुत्तर - उत्तर न दे पाना ।

अनुशीलनी

भावबोध और विचार :

(क) मौखिक :

(i) इस कहानी को ध्यान से पढ़िए और अपनी कक्षा में सुनाइए ।

(ii) इस प्रकार के और कहानियाँ पढ़िए और कक्षा में सुनाइए ।

(ख) लिखित :

(i) शिशुपाल ब्राह्मण के घर में आनेवाला परदेशी कौन था ?

(ii) शिशुपाल की किस बात से परदेशी चकित रह जाता है ?

(iii) अशोक का दरबार कहाँ था ?

(iv) राजमहल पहुँचने पर शिशुपाल की कैसी दशा हुई ?

(v) सम्राट अशोक ने शिशुपाल को न्याय-मंत्री क्यों बनाया ?

(vi) न्याय-मंत्री शिशुपाल पहरेदार के हत्यारे को कैसे पकड़ता है ?

(vii) न्याय-मंत्री राजा को क्या दण्ड देता है ?

(viii) शिशुपाल ने राजा को सजा देने के बाद क्या किया ?

अनुभव विस्तार :

(१) सम्राट अशोक के बारे में कुछ अधिक जानकारियाँ संग्रह कीजिए ।

(२) आपके घर में अतिथि- सत्कार कैसे होता है, लिखिए ।

भाषाबोध :

(क) यह किसने कहा ? किससे कहा ? क्यों कहा ?

(i) अतिथि के चरणों से मेरा चौका पवित्र हो जाएगा ।

(ii) आजकल बड़ा अन्याय हो रहा है ।

(iii) शेर बकरी एक घाट पानी पी रहे हैं ।

(iv) यदि मैं अशोक होता, तो आपकी इच्छा पूरी कर देता ।

(v) तुम पर पहरेदार की हत्या का आरोप है ।

(ख) 'क' स्तंभ के साथ 'ख' स्तंभ के सही शब्दों को मिलाइए ।

(क)	(ख)
परदेशी	दण्ड
शिशुपाल	राजकर्मचारी
पहरेदार	राज्य
पाटलीपुत्र	गाँव
फाँसी	न्यायमंत्री
बुद्धगया	अशोक

(ग) इन शब्दों से वाक्य बनाइए :

आजीविका, सौभाग्य, चौका, अतिथि- सत्कार, अभिप्राय, वक्तृता, अवसर, दमन, सन्देह, स्वतंत्रता

(घ) निम्नलिखित शब्दों के विलोम शब्द लिखिए :

गरीब, परदेशी, सेवक, कल्पना, अन्याय, आसान, निर्दय, मृत्यु, अपराधी, स्वतंत्रता

(ङ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) न्यायमंत्री का नाम क्या था ?

(ii) परदेशी अतिथि कौन था ?

(iii) असल में हत्यारा कौन था ?

(iv) शिशुपाल किस गाँव मे रहता था ?

(च) इन मुहावरों के अर्थ लिखिए :

(i) गोबर में फूल खिलना-

(ii) न्याय का डंका बजाना-

(iii) कलेजा धड़कना-

(iv) मिट्टी में मिलाना

(v) मुर्दा देह में प्राण आ जाना-

समास

जब दो से अधिक शब्दों के योग होते समय पारस्परिक सम्बन्ध सूचक शब्द या कारक चिह्न लोप हो जाता है, तथा एक नया शब्द बनाया जाता है,उसे समास पद कहते हैं । समास पद को पृथक्-पृथक् करने की प्रक्रिया को समास-विग्रह कहते हैं । समास का अर्थ है 'संक्षेप' । समास के चार भेद हैं-

(१) अव्ययीभाव समास

(२) तत्पुरुष समास

(३) द्वन्द्व समास

(४) बहुब्रीहि समास

तत्पुरुष समास - तत्पुरुष तत्पुरूष समास में दूसरा पद प्रधान होता है । बीच की विभक्ति का लोप होता है ।

जैसे - राजपुत्र = राजा का पुत्र

समास विग्रह कीजिए :

अतिथि सत्कार =

न्यायमंत्री =

राजमहल =

शीतकाल =

शांतिरक्षा =

राजकुल =